Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN: 2581-6241 Volume - 4, Issue - 5, May - 2021
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 3.871
Received on : 18/05/2021 Accepted on : 29/05/2021 Publication Date: 31/05/2021

जयशंकर प्रसाद कृत 'कामायनी' में दार्शनिक अभिव्यक्ति

डॉ. तृप्ता
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, अदिति महाविद्यालय
बवाना, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
Email - dr.triptasharma@yahoo.com

शोध-सार : 'कामायनी' प्रसाद जी की अमर कृति है। प्रस्तुत रचना में कवि ने इतिहास और पुराण का अद्भुत सम्मिश्रण दर्शाया है। दार्शनिक दृष्टिकोण से प्रसाद जी ने काश्मीरी शैव दर्शन से सम्बद्ध प्रत्यभिज्ञा दर्शन को ही इस कृति में अभिव्यक्त किया है। 'कामायनी' के मुख्य पात्र मसलन मनु (मन), श्रद्धा (हृदय), इड़ा (बुद्धि) के संघर्ष और समन्वय का विवेचन भी इसका प्रत्यक्ष दार्शनिक आधार माना जा सकता है। कवि ने अपनी मौलिक दृष्टि के तहत इसमें आनन्दवाद की स्थापना की है। आनन्दवाद की सृष्टि हेतु उन्होंने इसमें शैवागम (प्रत्यभिज्ञा दर्शन), वेदान्त-दर्शन, बौद्ध-दर्शन तथा उपनिषद के तत्वों आदि का उपभोग किया है। श्रद्धा और इड़ा का सामरस्य ही इच्छा, क्रिया और ज्ञान में अभिन्नत्व की सृष्टि कर मन को अखंड आनंद की अवस्था में पहुँचाते हैं। कवि का मानना है कि ज्ञान, क्रिया और इच्छा की विषमता ही जीवन में कष्टों का कारण बनते हैं, किन्तु इनका सामंजस्य ही जीवन को सुखद बनाता है। प्रत्यभिज्ञा दर्शन के इतर इसमें बौद्ध-दर्शन के दुखवाद, क्षणिकवाद और करूण तत्व को भी सम्मिलित किया गया है। 'कामायनी' में परमाणुवाद का वर्णन भी मिलता है। अन्ततः कवि ने 'कामायनी' में आनंद की अजस्र धारा को ही प्रवाहित किया है।

बीज-शब्द : पुरातन, प्रत्यभिज्ञा, रागात्मकता वृत्ति, बुद्धिवाद, प्रतीकात्मक, समरसता, शैवदर्शन, भौतिकवाद।

'कामायनी' आधुनिक हिन्दी साहित्य की एक अप्रतिम रचना तथा प्रसाद की अमर कृति है। पुरातन कथावस्तु के क्षीण तन्तुओं से महाकवि प्रसाद ने मानव-विकास की चिरन्तन गाथा ही इसके द्वारा प्रस्तुत की है। इतिहास और पुराण का अद्भुत सम्मिश्रण होने पर भी 'कामायनी' के कथानक में मानव-मन की वृत्तियों के क्रमिक विकास की मनोवैज्ञानिक व्याख्या को अन्तर्मुक्त करने में कवि को विलक्षण सफलता प्राप्त हुई है। मनु और श्रद्धा की ऐतिहासिक कथा के साथ इसमें मानव-मन के विकास और मुक्ति की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया भी संश्लिष्ट है।

कवि दृष्टा होता है, अतः उसका अपना दर्शन भी होता है। कॉलरिज ने तो कहा भी है कि-''गहन दार्शनिक हुए बिना कोई महान कवि नहीं हो सकता।'' 'कामायनी' के कथानक में दार्शनिक तत्वों का समावेश इसे दर्शन की कृति से मंडित कर देता है। 'कामायनी' में दर्शन की गरिमा अवश्य है, किन्तु उससे कथा को कोई व्याघात नहीं पहुँचा है। कथा के सहज प्रवाह और प्रसंग की अनिवार्य मांग ने जहाँ कहीं आवश्यक हुआ है, वहाँ दार्शनिक तथ्यों की पीठिका प्रस्तुत कर दी है। प्रसादजी के दार्शनिक सिद्धान्त व्यवहारिकता से मिलकर रुचिकर हो गये हैं। 'कामायनी' का मूल दर्शन प्रत्यभिज्ञा दर्शन है। प्रसाद के व्यक्तित्व और तदनुसार कृतित्व को प्रभावित करनेवाला यह दर्शन 'कामायनी' का गौरव है। अन्य दर्शनों में भी 'कामायनी' को बल मिला है, किन्तु बहुत कम। रायकृष्णदास जी कहते हैं-''प्रसाद जी के परिवार की मुख्य दार्शनिक विचारधारा प्रत्यभिज्ञा-दर्शन की परम्परा में ही थी, क्योंकि ये लोग शैव दर्शनों में से काश्मीर के प्रत्यभिज्ञा-दर्शन को ही अत्यन्त पुष्ट और प्रबल मानते हैं।''

अतः स्पष्ट है कि 'कामायनी' पर प्रत्यभिज्ञा-दर्शन का गहरा प्रभाव है। प्रसाद ने इसी आधार पर शक्ति को महाचिति और सदैव लीला-विलास करनेवाली कहा है। प्रसाद की ये पंक्तियाँ इसी श्रेणी में आती हैं -

कर रही लीलामय आनन्द,
महाचिति सजग हुई सी व्यक्त।
विश्व का उन्मीलन अभिराम,
इसी में सब रहते अनुरक्त।।

प्रत्यभिज्ञा दर्शन में आये जीव विषयक विचारों की छाया मनु के चित्रण में देखी जा सकती है। 'निर्वेद सर्ग' तक व्यक्त स्थिति मनु के ऐसे व्यवहार को व्यक्त करती है जो आणाव स्थिति का सूचक है। आगे श्रद्धा के संसर्ग से ज्ञान, इच्छा और क्रिया का समन्वय करते हुए वे आनन्द की भूमिका प्रस्तुत करते हैं। आनन्द सर्ग में यही भूमिका देखने को मिलती है।

'कामायनी' के दार्शनिक आधार को स्पष्ट करनेवाला वह पहला सूत्र है जिसमें पात्रों के स्वरूप द्वारा काव्य का तात्त्विक अभिप्राय व्यक्त होता है। मनु अर्थात् मनन शक्ति (मन) के साथ श्रद्धा अर्थात् हृदय की भावनात्मक सत्ता, विश्वास समन्वित रागात्मिका वृत्ति तथा इड़ा अर्थात् व्यवसायात्मिका बुद्धि के संघर्ष और समन्वय का विवेचन ही 'कामायनी' का प्रत्यक्ष दार्शनिक आधार है। 'कामायनी' की कथा का परिनिर्वाण मनु अर्थात् मन की आनन्दोपलब्धि के साथ होता है, अतः आनन्दवाद की प्रतिष्ठा 'कामायनी' कार का मुख्य लक्ष्य माना जाना चाहिए। 'कामायनी' में आनन्दवाद के विकास को देखते हुए कहा जा सकता है कि यह प्रसाद जी की अपनी मौलिक सृष्टि है जिसके निर्माण में उन्होंने मुख्यतः शैवागम (प्रत्यभिज्ञा दर्शन), वेदान्त दर्शन, बौद्ध दर्शन तथा उपनिषद् का आवश्यकतानुसार उपभोग किया है।

आनन्द को साध्य मानकर जिस साधना को प्रसाद जी ने प्राथमिकता दी है, वह है श्रद्धा और इड़ा की समन्वय भावना। श्रद्धा और इड़ा में समन्वय होने पर ही इच्छा, क्रिया और ज्ञान में सामरस्य उत्पन्न होता है और यह सामरस्य ही त्रिविध दुःखों की आत्यन्तिकी निवृत्ति में सहायक होता है। जब मन पूर्णतः श्रद्धावन होकर लक्ष्याभिमुख होगा तभी आनंद की प्राप्ति संभव है। अतः आनन्दोपलब्धि में समरसता की स्थिति अनिवार्य है और श्रद्धा की स्वीकृति भी उतनी ही काम्य है। 'कामायनी' में श्रद्धा को विश्वास, प्रेरम, समता, दया, सौख्य आदि उदात्त भावों का प्रतीक माना गया है। यह जगद्धात्री, सर्वमंगला अमृतधाम आदि रूपों में स्थान-स्थान पर वर्णित हुई है। श्रद्धा का यह रूप प्रसाद जी का कल्पित रूप न होकर वेद, उपनिषद्, गीता, योग-दर्शन, त्रिपुरा-रहस्य आदि शास्त्रों के अनुरूप है।

मानव मन के मस्तिष्क-पक्ष से संबंध रखनेवाली दूसरी वृत्ति है इड़ा अर्थात् बुद्धि। यह नाना प्रकार के भौतिक प्रपंचों एवं कार्य-व्यापारों में सम्पृक्त रहनेवाली तर्कमयी वृत्ति है। यह मन को व्यवसाय में प्रवृत्त कर पथभ्रष्ट ही करती है। प्रसाद जी ने 'कामायनी' के आमुख में इड़ा के विषय में लिखा है-"इड़ा देवताओं की स्वसा थी। मनुष्यों को चेतना प्रदान करनेवाली थी। इसलिए यज्ञों में इड़ा कर्म होती है। यह इड़ा का बुद्धिवान, श्रद्धा और मनु के बीच व्यवधान बनाने में सहायक होता है। फिर बुद्धिवाद के विकास में अधिक सुख की खोज में दुःख मिलना स्वाभाविक है।"

इड़ा के तात्त्विक अर्थ को समझने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि इड़ा (अर्थात बुद्धि) मन (अर्थात मनु) को उत्तेजित करने में तो समर्थ है किन्तु मन को परितुष्ट करने की उसमें क्षमता नहीं हैं यही कारण है कि श्रद्धाहीन बुद्धि (इड़ा) क्लेश, संताप और संघर्ष को जन्म देने में निरत रहकर अपनी कृतकार्यता समझती है। अकेली बुद्धि आनन्दवाद की स्थापना करने में असमर्थ रहती है। अतः उसे श्रद्धा का अवलम्ब ग्रहण करना होता है। प्रसाद इड़ा का स्वरूप और स्वभाव चित्रित करते हुए कहते हैं -

तुमने तो प्राणमयी ज्वाला का प्रणय प्रकाशन ग्रहण किया।
हाँ, ज्वलन, वासना को जीवन भ्रम तम में पहला स्थान दिया।

छन्द और संघर्ष के बीच जलन और ईर्ष्या पंक में लिप्त इड़ा केवल अभिशप्त जीवन का ही पोषण करती है 'बिखरी अलकें ज्यों तर्कजाल' शीर्षक गीत में इड़ा का बाह्य रूप जिस प्रतीकात्मक शैली से कवि ने अंकित किया है, वह उसके स्वरूप और कार्य-व्यापार का भी परिचय देता है। श्रद्धा इड़ा के स्वरूप को बताती है -

श्रद्धा बोली-"बन विषम ध्वान्त
सिर चढ़ी रही पाया न हृदय
तू विकल कर रही है अभिनय।"

इड़ा के संसर्ग से श्रद्धा पहले तो कुछ विचलित होती है, किन्तु शनैः-शनैः इड़ा में स्थैर्य आता है और वह राग को प्रगाढ़ बनाकर श्रद्धा में समन्वित हो जाती है। श्रद्धा और इड़ा का यह सामरस्य ही इच्छा, क्रिया और ज्ञान में अभिन्नत्व की सृष्टि कर मन को अखंड आनन्द की स्थिति में पहुँचाने का साधन है। इस प्रकार 'कामायनी' के प्रमुख पात्रों के प्रतीकात्मक स्वरूप तथा उनसे उपलब्ध आनंदवाद के अध्ययन से पता चलता है कि प्रसाद ने 'कामायनी' में प्रत्यभिज्ञा दर्शन को स्थान दिया है तथा उसके प्रमुख विचारों को अपनाना ही प्रसाद का लक्ष्य रहा है। इस दर्शन के प्रमुख अंग नियतिवाद, अभेदवाद, समरसतावाद और आनन्दवाद आदि हैं। इनके अतिरिक्त दुखवाद, क्षणिकवाद, करुणावाद, भौतिकवाद एवं परमाणुवाद आदि सिद्धान्तों का उल्लेख भी कहीं-कहीं हुआ है।

विश्व-जीवन के विधान में नियति का महत्वपूर्ण योग है। जीवन की कोई ऐसी घटना नहीं है जिसमें नियति का हाथ नहीं है। संयोग-वियोग, उत्थान-पतन, दुःख-सुख आदि सभी योग नियति-निर्दिष्ट हैं। प्रसाद ने कहा भी है -

चल रहा था विजन-पथ पर मधुर जीवन-खेल,
दो अपरिचित से नियति अब चाहती थी मेल।

प्रसाद कहते हैं नियति कर्मचक्र की प्रेरणा देती है जिससे मानव विवशता का अनुभव करते हुए जीवन चलाता रहता है। मनु और श्रद्धा में उद्भुत संघर्ष में नियति यहाँ से मनु को भगाने का विधान रचती है, परन्तु जब मनु के हृदय का संघर्ष और द्वन्द्व का निवारण नहीं होता तो नियति मनु को विकराल परिस्थितियों में डाल देती है-

इस नियति-नटी के अति भीषण अभिनय की छाया नाच रही।
खोखली शून्यता में प्रतिपद असफलता अधिक कुलाँच रही।

देव सृष्टि का ध्वंस, मनु द्वारा मानवीय सृष्टि की रचना एवं विकास नियति की प्रेरणा से ही हुआ है। प्रलय के उपरान्त के वातावरण में प्रसाद कहते हैं -

उस एकान्त नियति शासन में चले विवश धीरे-धीरे।
एक शान्त स्पन्दन लहरों का होता ज्यों सागर तीरे।।

शैलागम में नियति को शक्तिशालिनी तथा केवल मात्र सीमित आत्मा पर नियंत्रण करनेवाली ही कहा गया है, परन्तु जब जीवात्मा शिवत्व की ओर उन्मुख होता है तब वह नियति के शासन से नितान्त परे हो जाता है। 'रहस्य-सर्ग' में मनु श्रद्धा की सहायता से हिमालय के उत्तुंग शिखर कैलास पर पहुँच जाने पर नियति-तत्व के जीवात्मा से परे हो जाते हैं। जीवात्मा शिवत्व के सन्निकट होने पर नियति के बन्धनमय शासन से दूर हो जाता है। उसे पुनः नियति के खेल नहीं देखने पड़ते -

निराधार है, किन्तु ठहरना हम दोनों को आज यही है।
नियति खेल देखूँ न सुनो अब इसका अन्य उपाय नहीं है।।

प्रत्याभिज्ञादर्शन के अध्ययन से पता चलता है कि शिव से लेकर पृथ्वी तक छत्तीस तत्त्वों को एक चिति रूप परमानन्दमय प्रकाशक घनशिव से अभेद रूप में स्फुरित होते हुए बताया गया है। शिव से रहित किसी पदार्थ की सत्ता नहीं है। अभेदवाद की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि अभेदवाद और आभासवाद संपूर्ण जड़-चेतन पदार्थों को उसी एक चिति का स्वरूप माना गया है। प्रसाद ने अभेदवादी विचारों को 'कामायनी' में स्थान-स्थान पर व्यक्त किया है। प्रारंभ में ही वे कहते हैं -

नीचे जल था, ऊपर हिम था
एक तरल था, एक सघन;
एक तत्त्व की ही प्रधानता
कहो उसे जड़ या चेतन।

प्रसाद ने स्पष्टतः कहा है कि जब तक मानव इस ईश्वर और विश्व संबंधी पूर्ण अद्वैतता को नहीं समझता अथवा अभेदवाद की विचारधारा को नहीं अपनाता, तब तक उसे सुख और शांति नहीं मिल सकती, क्योंकि द्वयता के कारण ही तो आज मनुष्य संसार से भागने का प्रयत्न कर रहा है। नाना प्रकार की समस्याओं में फँस रहा है जिससे एकता नष्ट हो रही है -

यह अभिनव मानव प्रजा सृष्टि,
द्वयता में लगी निरन्तर ही वर्णों की करती रहे वृष्टि।
अनजान समस्याएँ गढ़ती रचती हो अपनी ही विनष्टि।।

अंत में भी प्रसाद यही कहते हैं कि यदि मानव अपने सुख-दुख को समझता हुआ सांसारिक जीवन में भेद बुद्धि को समाप्त कर दे तो उसे सुख मिल सकता है।

समरसता शब्द और समरसता का सिद्धान्त प्रसाद जी ने शैव-दर्शन से ग्रहण किया है। जिस प्रकार एक नदी समुद्र में मिलकर समरस हो जाती है और समुद्र भी नदी से मिलकर एक रूप और अभेदात्मक हो जाता है, उसी तरह जीव परमात्मा से मिलकर एकरस हो जाता है- यही समरसता है। 'कामायनी' में इसी तत्त्व को प्रसाद जी ने श्रद्धा और इड़ा के संघर्ष और समन्वय द्वारा प्रतिपादित किया है। प्रसाद कहते हैं कि समाज में जब तक सामरस्य का विनिवेश नहीं होगा, तब तक दुख, चिन्ता और कष्ट निरन्तर बढ़ते रहेंगे -

विषमता की पीड़ा से व्यस्त
हो रहा स्पंदित विश्व महान्
यही दुख-दुख विकास का सत्य,
यही भूमा का मधुमय दान।।

स्त्री-पुरुष के बीच रहनेवाला वैषम्य जीवनभर सालता रहता है। इस विषमता को दूर करने के लिए तो प्रसाद कहते हैं-

तुम भूल गये पुरुषत्व मोह में, कुछ सत्ता है नारी की।
समरसता है सम्बन्ध बनी, अधिकारी और अधिकारी की।।

यही उपदेश श्रद्धा भी मानव को देती है -

सबकी समरसता का प्रचार
मेरे सुत सुन माँ की पुकार।

व्यक्ति की विषमता उसके जीवन को कहीं से कहीं ले जाती है। ज्ञान, क्रिया और इच्छा के विषमीकरण से जीवन कष्ट का घर बन जाता है, किन्तु उनका मिलन जीवन में समरसता लाता है-

स्वप्न स्वाप जागरण भस्म हो
इच्छा, क्रिया ज्ञान मिल लय थे
दिव्य अनाहत पर निनाद् वश
श्रद्धायुत बस मनु तन्मय थे।

जब तक मनुष्य मेरे-तेरे और अपने-पराये से मुक्त नहीं होगा तब तक कल्याण असंभव है, अहम् का इदम् में विलीन होना ही समरसता है। इसी आधार पर मनु को कैलाश पर्वत ले जाया जाता है और वे सामरस्य को पाकर उस बिन्दु पर पहुँच जाते हैं जहाँ-

समरस थे जड़ या चेतन, सुन्दर साकार बना था।
चेतनता एक विलसती, आनन्द अखण्ड घना था।।

'कामायनी' का मूलदर्शन श्रद्धामूलक आनन्दवाद है। इसमें मुख्यतः शैव दर्शन का रंग है। तैत्तरीय उपनिषद में आनन्द का वर्णन करते हुए लिखा गया है-"आनन्द ही ब्रह्म है। आनंद से ही समस्त प्राणी उत्पन्न होते हैं, उत्पन्न होकर आनंद से ही जीते हैं तथा इस लोक से प्रस्थान करते हुए अंत में आनंद में ही प्रविष्ट हो जाते हैं।"

प्रसाद ने अपने दर्शन में भारतीय दर्शन और उपनिषदों से भी उपयोगी तत्त्वों का चयन किया है। वे इस दृश्यमान जगत को आनन्दमूर्ति शिव का विग्रह मानकर सत्य (सत्) स्वयं आनन्दमय मनाते हैं। 'कामायनी' का दर्शन आत्मवाद की सुदृढ़ भूमि पर प्रतिष्ठित है, इसलिए 'कामायनी' में ज्ञान को प्रधानता न देकर श्रद्धा को प्रधानता दी गई है।। वास्तव में सौन्दर्यमयी चंचल कृतियाँ, तर्कमयी बुद्धि और आसुरी वृत्तियाँ मानव जीवन में उस आनंद से वंचित रखने का प्रयत्न करती हैं जो सुख और शांति का प्रदाता है। अतः मनुष्य को चाहिए कि शुद्ध पे्रम का सम्बल ग्रहण कर जीवन को आनंदमय बनाये। तभी कहा है -

बाधा जीवन की न पास में अब आने दो,
इस हताश जीवन में क्षण सुख मिल जाने दो।

'कामायनी' में शिव के पाँच रूप- संहारक, सृष्टा, मायायोगी, मंत्रवित् और नटराज प्रस्तुत किए हैं। आनंद के लिए ज्ञान, इच्छा और क्रिया का समन्वय आवश्यक है। मस्तिष्क और हृदय का समन्वय भी आवश्यक है। जीवन को शांति और सुख के मार्ग पर अग्रसर करने के लिए यह अनिवार्य है कि वर्ग-संघर्ष और वैयक्तिक लोभ-मोह की सीमाओं से ऊपर उठकर हम चितिशक्ति के अखंड आनन्द को उपलब्ध करने की चेष्टा करें। व्यष्टिगत सुख को समष्टिगत सुख बनाने की बात ही प्रसाद भी कहते हैं-

औरों को हँसते देखो, मनु हँसो और सुख पाओ,
अपने सुख को विस्तृत कर लो, सबको सुखी बनाओ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'कामायनी' का मूलदर्शन शैव-दर्शन है और उसी के प्रमुख-प्रमुख अंगों को इस कथा में स्थान मिला है, किन्तु कुछ इतर दर्शन भी इसमें आ गए हैं।

'कामायनी' में दुखवादी विचारधारा को भी देखा जा सकता है। प्रसाद की दृष्टि में सुख और दुख, दिन और रात के समान हैं। सुख के बाद दुख और दुख के बाद सुख आता है -

दुःख की पिछली रजनी बीच
विकसता सुख का नवल प्रभात।

बौद्धदर्शन के दुखवाद के अतिरिक्त क्षणिकवाद का वर्णन भी प्रसाद ने किया। प्रसाद कहते हैं जीवन में कहीं स्थिरता नहीं। विनाश, विध्वंस, अंधकार और अभाव-शून्यता ही सत्य है। प्रसाद ने करूण तत्त्व को भी ग्रहण किया। श्रद्धा के माध्यम से प्रसाद बोलते हैं कि करूणा के अभाव में मनुष्य एकान्त और स्वार्थी हो जाता है। श्रद्धा द्वारा इड़ा को क्षमा करना भी करूणा का पोषण करना है। परमाणुवाद भी 'कामायनी' में दिखाई देता है। पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु का निर्माण क्रमशः परमाणुओं के माध्यम से हुआ है। 'कामायनी' में भी सृष्टि रचना संदर्भ -

यह मूल शक्ति उठ खड़ी हुई, अपने आलस का त्याग किये।
परमाणु बाल सब दौड़ पड़े, जिसका सुन्दर अनुराग लिए।

भौतिकवाद के आधार पर सारस्वत नगर निवासियों की क्रान्ति समाजवादी व्यवस्था की ओर संकेत करती है। देवताओं की विलासिता, मनु की भौतिकवादी विचारधारा और सारस्वत नगर का ह्रास सभी भौतिकवादी दृष्टि के सहारे चित्रित किया है।

अन्ततः कहा जा सकता है कि प्रसाद की मूल विचारधारा और 'कामायनी' की दार्शनिक पृष्ठभूमि काश्मीरी शैवदर्शन प्रत्यभिज्ञादर्शन से ही सम्बद्ध है। 'कामायनी' में अनुभूति, बुद्धि, भाषा एवं कला का समुचित सन्निवेश है। सबसे बड़ी बात इस कृति में दर्शन और काव्य का समुचित संयोग है और कहीं भी दर्शन काव्य पर हावी नहीं हुआ। श्रद्धा नियोजित संतुलित बुद्धि के सहयोग से मनु उस मार्ग पर चलने योग्य होता है जो जीवन का चरम साध्य है। ताप, शाप, दुख, रैन्य, संघर्ष और वैषम्य की जड़ता तिरोहित हो जाती है और आनन्द की अजस्रधारा प्रवाहित होने लगती है -

शापित न यहाँ है कोई, तापित पापी न यहाँ है।
जीवन वसुधा समतल है, समरस जो कि जहाँ है।।

बहरहाल कवि ने मनुष्य के मन के अंतर्विकास को दर्शाते हुए उसे आनंदवाद में पर्यवसित किया है।

संदर्भ-ग्रंथ:

1. गजानन माधव मुक्तिबोध; 'कामायनी' एक पुनर्विचार, संस्करण - II, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, जनवरी 2015 ।
2. डॉ. उदयभानु सिंह ; कामायनी लोचन, संस्करण- I, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, जनवरी 2011।
3. रामस्वरूप चतुर्वेदी ; हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1991।
4. डॉ. बच्चन सिंह ; आधुनिक हिन्दी का इतिहास, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997।
5. डॉ. राधाकृष्णन ; भारतीय दर्शन, राजपाल प्रकाशन, दिल्ली, जनवरी 2012।
6. वाचस्पति गैरोला ; वैदिक साहित्य और संस्कृति, चौखंभा संस्कृति, प्रतिष्ठान, 2013।